ISSN 2348-3857

राजस्थान के काव्य साहित्य में वर्णित जनाक्रोश एवं जनचेतना : एक अध्ययन

डॉ. (श्रीमती) सुमन ढाका

पीडीएफ, इतिहास विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान)

शोध सारांश

साहित्य सदैव से ही समाज के लिए एक उत्प्रेरक के रूप में कार्य कर रहा है। अंग्रेजों की नीतियों के विरोध में हुये स्वतंत्रता संग्राम, जिन्हें हम 1857 के स्वतंत्रता संग्राम, किसान आन्दोलन, जनजातीय आन्दोलन, प्रजामण्डल आन्दोलन आदि आन्दोलनों के रूप में वर्गीकृत करते हैं। राजस्थान में होने वाले इन आन्दोलनों का रूप तथा स्वरूप कुछ भी रहा हो लेकिन ' राजस्थान के कवियों ' ने अपनी कृतियों में राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत गीत लिखकर स्वतंत्रता संग्राम में प्रतिपल तत्कालीन समाज को एक दिशा प्रदान की। यहाँ के कवियों ने जाति, धर्म, सम्प्रदाय की भावना से ऊपर उठकर हिन्दू, मुसलमानों को 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में एक जुट होकर अंग्रेजों का प्रतिकार करने का आह्वान किया। राजस्थान के ऐसे कवियों में सूर्यमल्ल मिश्रण, ठाकुर केसरी सिंह बारहठ, माणिक्य लाल वर्मा, कविराज बाँकीदास, शंकरदान सामौर, जयनारायण व्यास इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों से अंकित रहेंगे। जिन्होंने अंग्रेजों का साथ देने वाले नरेशों को धिक्कारते हुए सर्वसाधारण के भीतर राष्ट्रीयता की भावना को जगाकर स्वतंत्रता संग्राम की एक छोटी सी लौ को ऐसे ज्वालामुखी का रूप दे दिया जिसके आगे अंग्रेज टिक ना सके। प्रस्तुत शोध पत्र में राजस्थान के कवियों की कृतियों में परिलक्षित जनाक्रोश एवम् जनचेतना का अध्ययन किया गया है।

साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य जनहित की सोच का प्रतीक है। साहित्य अपने युग की घटनाओं का प्रतिनिधित्व करता है। समाज में घटित घटनायें, मान्यतायें, मूल्य, मानसिकता, परम्परायें, लोक व्यवहार, धारणायें और मनोवृत्तियाँ साहित्य में प्रत्यक्ष एवम् अप्रत्यक्ष रूप से प्रतिबिम्बित होती हैं। साहित्य जनता की भावनाओं को समाज के सम्मुख प्रस्तुत कर युग परिवर्तन की शक्ति को समाहित किये हुए रहता है। राजस्थान का साहित्य इसका अपवाद नहीं है। यही कारण कि राजस्थान को एक ओर जहाँ अपने युद्धवीर सूरमाओं पर गर्व है वही अपने साहित्यकारों, कवियों एवम् संतों पर भी गर्व है, जिन्होंने अपनी कलम एवम् वाणी के द्वारा समाज में व्याप्त बुराईयों तथा अन्याय को मिटाने हेतु निरपेक्ष दृष्टिकोण से साहित्य सर्जन करते हुए जन आक्रोश से जन चेतना का मार्ग प्रशस्त किया।

राजस्थान का डिंगल साहित्य, साहित्य और इतिहास दोनों ही दृष्टियों से अद्वितीय है। इसका कारण यह भी है कि यहाँ के कवियों ने सुनी सुनाई कथा कहानियों को ही काव्य के आकर्षक परिधानों में आवेष्ठित कर लोक रंजन नहीं किया, अपितु जीवन और मृत्यु के महाताण्डव को अपनी आँखों के समक्ष जिस रूप में देखा उसे काव्यमय रूपों में ढाल कर इतिहास-धर्म, समाज-धर्म, और कवि-धर्म का एक साथ निर्वाह किया।[1] राजस्थान में इतिहास और साहित्य रचना की परम्परा दीर्घकाल से चली आ रही है यहाँ के साहित्य को वीर, शृंगार और भक्ति रस की त्रिवेणी कहा जाता है।[2] ग्यारहवीं शताब्दी में जनभाषाओं का परिमार्जन होना प्रारम्भ हुआ था। अत: इसके बाद की रचनाओं को ही विशुद्ध डिंगल (राजस्थानी) के अन्तर्गत ही माना जाना चाहिए। 13वीं शताब्दी की अपभ्रंश भाषा से अनेक काव्य ग्रन्थ लिखे गये। राजस्थान में डिंगल (राजस्थानी) की अपेक्षा पिंगल (ब्रज एवम् हिन्दी) भाषा में काव्य अधिक लिखा गया

राजस्थानी में रचित काव्य को तीन शैलियों में विभाजित किया गया **(I) जैन शैली-** जैन आचार्यो ने धार्मिक साहित्य जिस शैली में लिखा। प्राकृत, अपभ्रंश हिन्दी एवम् राजस्थानी में रचना की गई। **(II) चारण शैली-** चारण जाति के कवि द्वारा जिस शैली में रचना की गई। चारण कवियों ने ऐतिहासिक काव्य अधिक लिखा। इनके द्वारा पिंगल भाषा का प्रयोग कम, अपभ्रंश मिश्रित

डिंगल का प्रयोग अधिक किया गया। **(III) लौकिक शैली-** जिन कवियों ने धार्मिक और जातीय परिवेश से हटकर काव्य साधना की उसे लौकिक साहित्य और अभिव्यक्ति के ढंग की लौकिक शैली कहा जाता है। जैन तथा चारण कवियों ने बंधी बंधाई शैली में काव्य रचना की। चारण कवि अपनी परिधि से निकलकर बाहर अवश्य आए परन्तु जैन धर्माचार्य ने अपनी धार्मिक मान्यताओं को नहीं छोड़ा। लौकिक शैली ने सदैव समयानुकूल भाषा शैली को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया।[3] लोक जीवन के भाव शब्दों का रूप लेकर जब मुख से अभिव्यक्त होते हैं तो लोक साहित्य की उत्पत्ति होती है। मानव स्रदय की सहज अभिव्यक्ति लोक साहित्य के माध्यम से ही संभव है क्योंकि इसमें जनसाधारण की भाषा का प्रयोग होता है।

पाश्चात्य आलोचकों ने भारतीय साहित्य में ऐतिहासिक तथ्यान्वेषण के तत्वों को गौण बतलाया। यह सही है कि ऐतिहासिक साहित्यिक रचनाऐं शत-प्रतिशत इतिहास नहीं बन सकतीं परन्तु ऐसी कृतियों को इतिहास से पृथक भी नहीं किया जा सकता। इतना ही नहीं राजस्थान की अनेक ऐतिहासिक काव्यकृतियों ने इतिहास की लुप्त कड़ियों को जोडने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। इतना सही है कि राजस्थान में उपलब्ध परन्तु अव्यवस्थित साहित्य के योजनाबद्ध समायोजन की दिशा में निश्चित एवम् निर्धारित प्रारूप बनाकर तद्रुरूप कार्य करने की चेष्टा नहीं की गई। हिन्दी साहित्य के सन्दर्भ में भी राजस्थानी साहित्य का जहाँ कहीं उल्लेख हुआ है वह प्राय: वीर रस के सन्दर्भ में किया गया परन्तु योजनाबद्ध समायोजन के अभाव में राजस्थान के साहित्य को कम नहीं आँका जा सकता। राजस्थान में रचित विपुल वीर रसात्मक साहित्य और यहाँ की भाषा के मूल्यांकन से स्पष्ट हो जाता है कि राजस्थान का साहित्य विलक्षण है यहाँ की भाषा और साहित्य ने कायर से कायर मनुष्य को वीरता का अमृत पिलाया। जीवन और जगत की वास्तविकता को मूर्त रूप प्रदान करने की दृष्टि से डिंगल साहित्य अनुपम है यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं है।

राजस्थान के कवियों ने विविध प्रसंगों-परिपेक्ष्यों के तदन्तर जिन दोहों, छन्दों और गीतों की रचना की उनमें इतिहास अपनी कहानी स्वयं दोहराता प्रतीत होता है। युग-युगों से जिन जिह्वा पर आसीन पीढ़ी दर पीढ़ी विरासत में मिली ऐसी लिखित अलिखित साहित्यिक विधाएं नि:सन्देह मानव संस्कृति के गौरवशाली अतीत का प्रतिबिम्ब है। 15वीं शताब्दी से 19वीं शताब्दी के काल में हिन्दू मुसलमानों, प्रान्तीय शासकों में सम्पन्न युद्धों, अंग्रेजों के प्रति भारतीय जनता के आक्रोश का जीवन्त चित्रण यहाँ के काव्य में अत्यन्त सूक्ष्मत के साथ हुआ है। राजस्थान साहित्य के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ जैसे-जैसे प्रकाश में आ रहे हैं वैसे-वैसे मुगल दरबारों में निर्मित तवारिख ग्रन्थों द्वारा सन्दर्भित भारतीय इतिहास की घटनाओं की ऐतिहासिकता पर प्रश्न चिन्ह अंकित होने लगे हैं।[4] राजस्थानी काव्य में वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं के तिथि, वार, संवत् दोनों पक्षों के योद्धाओं की जानकारी तथ्यात्मक वर्णन यहाँ के रचनाकारों, इतिहासकारों की अद्भुत काव्य-कौशल तथा ऐतिहासिक आकर्षण का परिचय देता है।

राजस्थान के कवियों ने धन दौलत, यश सम्मान के लोभ में कभी भी अपने वीरों की प्रशंसा के अपने जन्मजात गुण पर आँच नहीं आने दी। बादशाह अकबर के दरबार के नवरत्नों में से एक बीकानेर के भक्त कवि पृथ्वीराज राठौड ने अकबर के शत्रु मेवाड के महाराणा प्रताप की स्वाभिमानी प्रवृत्ति, वीरता स्वदेश प्रेम की प्रशंसा में लिखा

'' धर बांकी दिन पाधरा, मरद न मूकै माण।
घणा नरिदा धोरियौ, रहै गिरंदा राणा ।।
माई एहडा पूत जण, जेहडा राणा प्रताप।
अकबर सूतौ ओझकै, जाण सिराणै सांप ।।
अकबर समंद अथह, सूरापण भरियै
सकळ मेवाडी तिण मांह पोयण फूल प्रतापसी।

इसी तरह कवि दुरसा आढा ने भी महाराण प्रताप की प्रशंसा में लिखा

अकबर समंद अथह तिह डूबा हिन्दू तुरक।
मेवाडो तिणह माँह, पोयण फूल प्रतापसी।।

1818 ई. से 1857 ई. का राजस्थान का इतिहास अंग्रेजी आधिपत्य एवम् सामान्य जनता के उत्पीड़न का इतिहास रहा। अंग्रेजों के कार्यो ने लोगों में आक्रोश पैदा कर दिया। राजस्थान में इस जन असन्तोष के कई कारण थे। आंग्ल राजपूत संधियों एवम् अंग्रेज रेजीडेंटों के अनुचित हस्तक्षेप के द्वारा राजस्थान के शासकों की आंतरिक एवम् बाह्य शक्तियों का समाप्त होना, अंग्रेजी फौजों के कारण राज्यों की आर्थिक स्थितियों का कमजोर होना, सामन्तों की सेनाओं की अनावश्यकता के कारण बढती हुई बेकारी, अंग्रेजों द्वारा सामाजिक कुरुतियों पर कुठाराघात से उत्पन्न असन्तोष, शरगणागत की प्रथाओं का नष्ट होना आदि अनेक परिस्थितियों ने जनता को अंग्रेज विरोधी बना दिया। जनता द्वारा जताए गए तीव्र असन्तोष आक्रोश से साहित्यकार इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने अपनी रचनाओं में इन आक्रोश एवम् असन्तोष को समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया।

राजस्थानी साहित्यकार कवि बाँकीदास असिया ने दूरदृष्टि का परिचय देते हुए भारतीय नरेशों को अंग्रेजी खतरे से सावचेत करने की पहल की।[5]

आयो इंगरेज मुलक न उपर, आहंस लीना खांच डरा
धणियो मरे न दीधी धरती धणियो गयोगई धरा।
फौजो देख न कीधी फौजों दोय न कीधा खलांडला
खवा खंच चूडै खवंद रै, उण इज चूडै गई इला।
महि जातां चीयातां महलांऐ दुय मरण तणां अवसाण
राखी रै किहिक रजपूती तरदो हिन्दू मुसलमान।
पत जोधाण, उदैपर, जैपर, पट्ट धंरा खूटा परियाण
आंके गई आवसी आंके बांके आसल किया बखाण।

इस काव्य के माध्यम से कवि ने जोधपुर, उदयपुर, जयपुर के अधिपतियों में जोश पैदा कर हिन्दू मुसलमानों को अंग्रेजी खतरे के प्रति एक होने की प्रेरणा दी। भू स्वामियों को अंग्रेजों से पुन: अपनी भूमि प्राप्त करने के लिए उकसाया है

इसी तरह शंकरदान सामौर जनकवि ने भी गाँव-गाँव जाकर जाट, सिख, मुसलमान, मराठा, राजपूतों को अंग्रेजों का भरोसा छोड़कर अपना नफा नुकसान समझाते हुए भारत की विजय तथा किसानों की समृद्धि हेतु आत्मविश्वास सहित अंग्रेजों को पराजित करने के लिए कहा

वाणीजां नीत हित, देस जाणै बुरी
नफे सू भलो रे बुरो नापै
कुलखणां देस हित काज करसी किसा
दुखियारी लूट हूं नही धापै
धरा हिंदवाण री, दाब ली दगा सूं
प्रगट में लड्यो ही पार पड्सी
संकट में हेक होय, भेद मेटो सकल
लोक जद जोस सूं, जेबर लडसी
मुसलमां मिले राजपूत ओ मराठा
जाट सिंख पंथ, छंड जबर जुसी
दोडसी देसरा, दव्योडा दाकले
मुलकरा मीठा ठग, तुरंत मुडसी
भरोसो छोड फिरगांण रो भ्रम्योडा
निरखसी नफो नुकसान नक्की
नवोनति धान, करसाण निपावसी
पावसी फते हिंदवाण पक्की

शंकरदान के काव्य में युगीन चेतना के स्वर सशक्त रूप से उभरे। राष्ट्र के सुप्त पौरुष एवम् निष्पद गौरव भाव को जगाने, लोगों में ऐक्यभाव का संचार करने, कर्तव्य विमुख हो चुके सत्ताधीशों को शब्दों से प्रताडित करने एवम् विदेशी शासन के शोषण से हताश जनसाधारण को उठ खडे होने का आह्वान शंकरदान सामोर के काव्य में मिलता है। अपनी वणिक वृत्ति से अंग्रेजों ने पूर्ववर्ती सभी आक्रान्ताओं को पीछे छोड़ दिया शंकर सामोर ने अंग्रेजों को चंगेज खां से भी दो कदम आगे बताया। '' महलज लूटण मोकला चढ्या सुण्या चंगेज लूटण झूंपा लालची आया बस इंगरेज।'' 1857 के विप्लव का दु:खद पहलू यह रहा कि राजस्थान के सभी रजवाडों ने उसे कुचलने में अंग्रेजों को सहयोग दिया।[6] सामोर ने अपनी लेखनी द्वारा इन देश द्रोहियों की खुलकर भर्त्सना की।

'' देख मरै हित देश रै, पेख सचौ रजपूत
सरदारा तानै सदा, कहसी जगत कपूत।
खास बांधवां खीण सैण गोरिया गिण सचा
भूं बावे अहडा बीज फोग फोग फल भोगसी।[7]

1847 ई. अंग्रेजों की नसीराबाद छावनी को लूटकर अंग्रेजी कूटनीति का विरोध करने वाले शेखावाटी के डूंगजी, जवाहर जी की वीरता की प्रशस्ति में अनेक गीत लिखे गये।

ज्वार डूंग दीधी जरू, रिपुवां इण विध रेस
रैणव रो इचरज रयौ, सुण जुध बात महैस
रीझां देवण जुध करण, मेम सुणै जग मांय
ज्वार डूंग दोसूं जिसा, नर जनमै फिर नाय
छोटा मोटा गाँव लूटिया नही नाम डूंगजी
नाक करो तो लूटो डूंगजी अंग्रेजों की छावनी
हाथ जोड कहे अंग्रेजो री कामणी
छावणी लूट मत भंवर लाडा[8]

कवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने भारतवासियों की मनोदशा के लिए तत्कालीन शासकों की अदूरदर्शिता एवम् फूट की नीति को उत्तरदायी मानते हुए अंग्रेजों के समक्ष नतमस्तक होने वाले कायरों के लिए लिखा

तन दुरंग अर जीव तन, कढणै, मरणै हेक।
जीव विणाठा जे कढौ, नाम रहीजै नेक।

फरवरी 1903 में जब वायसराय लार्ड कर्जन से मिलने भारतीय नरेशों के दल में शामिल होने के लिए मेवाड के महाराणा

फतेह सिंह जी दिल्ली जा रहे थे तब कवि केसरी सिंह बारहठ ने '' चेतावनी रा चूंगटिया'' के रूप में कतिपय दोहे लिखकर महाराणा को भेजे जिसके फलस्वरूप महाराणा फतेह सिंह को सुप्त आत्म गौरव एवम् स्वातन्त्रय प्रेम जागा।[9] फिर फतेह सिंह दिल्ली दरबार में उपस्थित नहीं हुए चेतावनी रा चूंगटिया की कुछ पंक्तियां

पग पग भम्या पहाड, धरा छोड राख्यो धरम।
महाराणा मेवाड हिरदे बसिया हिंद रे।।
घण धलिया घमसाण राणा सदा रहिया निडर।
पेखतां फुरमाण हलचल किय फतमल हुवै।।
नरियदं सह नजराणां, झुक करसी सरसी जिका।
पसरेलो किय पाण, पांण थका थारो फता।।
देखैलो हिदवाण निज सूरज दिस नेह सू।
पण तारा परमाण, निरख निसासां नाखासी।।

केसरी सिंह स्वयं स्वातन्त्रय प्रेमी, आन बान हेतु कफन बाँधकर मृत्यु की चुनौती को स्वीकार करने वाले योद्धा थे।

राजस्थानी कवि बांकीदास ने अपनी कविताओं में अंग्रेजी प्रशासन के हस्तक्षेप तथा उसके परिणामों का चित्रण करते हुए हिन्दू मुसलमानों को अंग्रेजों के विरुद्ध संगठित रहने की प्रेरणा दी।[10]

'' महि जातां चीचांता महिलां, अै दुय मरण तणा अवसाण
राखौ रे कीहिंक रजपूती, मरद हिन्दू कि मुसलमान।''

कवि बांकीदास ने आंग्ल राजपूत संधियों (1817-1818) में राजस्थान के तीन राज्यों की भूमिका के कारण जोधपुर, उदयपुर, जयपुर के शासकों पर व्यंग्य करते हुए तीनों शासकों की भर्त्सना की जिन्होंने अंग्रेजों का प्रतिरोध नहीं किया।[11]

पुर जोधाण, उदैयपुर, जैपुर, यह धरां खूंटा परियाण।
आंके गयी आवसी आंके बांके आसल किया बखाण।।

कवि बांकीदास ने मरुधर नरेश मान सिंह की प्रशंसा में निम्नलिखित पंक्ति लिखी जब मान सिंह ने नागपुर नरेश भौसला मधुराज को अंग्रेजों की धमकियों की अवहेलना कर संवत् 1887 में एवम् इन्दौर के होल्कर को मारवाड में शरण दी

देख गरूड अंग्रेज दल, बण्या अबर नृप व्याल।
जठै मान जोधाहरो, भूप हुओ चन्द्र भाल।।

अंग्रेजी हस्तक्षेप के कारण राजस्थान के लघु उद्योगों पर प्रतिकूल प्रभाव पडा। 1835 ई. में अंग्रेजों ने जयपुर दरबार पर दबाव बनाकर सांभर के नमक पर पूर्ण नियंन्त्रण स्थापित कर लिया। इस कृत्य की सम्पूर्ण शेखावाटी में प्रतिक्रिया हुई।

'' म्हारां राजा भौलो सांभर तो दे दानी अंगरेज ने
म्हारा टाबर भूख रोटी तो मांगै तीखे लूण री।।[12]

राजस्थान की आर्थिक स्थिति को जर्जर अवस्था में पहुंचाने में अंग्रेजों ने कोई कसर नहीं छोडी। ऐसे में प्रकृति आपदा अकाल तो जनता की कमर ही तोड देता था। राजस्थान के लोक गीतों में जनता की दरिद्रता, बेकारी, लाचारी निम्न दोहा प्रकट करता है जिसमें कहा गया है जो थोडी बहुत मोठ बाजरी हुयी गरीब जनता ने लूट ली और घोडों ने घास लूट ली।''

'' मिनका निठगियो मोठ बाजरी, घोडा निठगियो घास।''

राजस्थान के कवियों ने ना केवल अपने काव्य गीतों द्वारा जन आक्रोश को प्रदर्शित किया अपितु समय-समय पर समाज में फैली कुप्रथा को दूर कर जन चेतना जगाने का कार्य भी किया। इन कवियों ने पर्दा प्रथा, जाति प्रथा नुक्ता प्रथा, भ्रष्टाचार के विरुद्ध ना केवल विरोध प्रदर्शित किया अपितु अपने गीतों ख्यालों द्वारा जन जागरण करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। पंडित हीरालाल शास्त्री ने नुक्ता प्रथा के खिलाफ अपने गीत ''**नुक्ता को पाप**'' में आवाज उठायी।

जीवन कुटी की कण सुणौ ये, नुकतो पाप घणो जबरो।
घर में मौत भई जद देखो, माच्यो रोज घणे जबरो।
मरी लाश पर बैठ र जीमो, समझो पाप घणो जबरौ।

इस तरह शास्त्री जी ने ''**घूंघटो**'' गीत में पर्दा प्रथा का विरोध किया

'' थे तो बार उघाडो सारो आफत वारो घूंघटो
लाग्या भोत बडो यो पाप, अब तो दूर हटावो आप,
सुधरै मिनख जमारो प्यारो, बार उघारो घूंघटो
घर की घर में पडी सिडो थे, कुछ तो बार आर अडो थे
उजडै बोला काम पड्या थे बार उघारो घूंघटो।''

इन्होंने नारी को जागृत करने हेतु कई गीतों की रचना की जिसमें नारी को शक्ति की देवी मान अपनी ताकत पहचानने, नारी की शिक्षा प्राप्त करने, परिवार में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त करने हेतु प्रेरित किया

''नारी मरदाणी। तू आबरू की अम्मर सेनाणी।
नारी मरदानी खाली होगो टापरो सो देख लै ए मरदाणी
आंख्या खोलर... आंख्या खोलर झांक, तू ई कै कानी झांक
अब तो घर कै कानी झांक, नारी मरदाणी
आज बीत्यो पीसणो जद पीसै कोई मरदाणी
घर में कौने, घर में कौने नाज
जद भी लेणा की छैदा जद भी बोरा की छै दाब नारी मरदाणी।''

इस तरह जयनारायण व्यास ने लड़का-लड़की के पालन पोषण में बरते जाने वाले भेदभावपूर्ण व्यवहार का विरोध करते हुए लड़का-लड़की को समान माना है[13]

'' बेटा बेटी एक आंत है फिर मन में क्यों दुभांत है,
समझे हो क्या स्वारथ सार, लडका हुआ थालियां बाजी,
घर वाले रहते सब राजी ,क्यों कन्या से दुख अपार
भैया को दो चुपड चपाती, कन्या रूखी रोटी खाती
पर न बोलती मन को मार ।''

कुप्रथा के अलावा शासन, भ्रष्टाचार, चोरी के विरुद्ध भी जनचेतना जागृत करने के लिए काव्य लिखे गये। मारवाड के नौकरशाहों की मनोदशा पर व्यंग्य करते हुए आचलेश्वर प्रसाद ने लिखा

इण मारवाड के मांय म्हे तो मजा करां
बडे राजरां नौकर हां मोटी तनखां पावां हा।
भत्तों की है भरमाण म्हें तो मजा करां
ठोठी रैयत ले लूटां जो कूके उण ने कूटां।

इसी तरह भ्रष्टाचार के विरोध में लिखा

'' चारी बाडो घणो होग्यो रे कोई तो मूण्डे बोलो
सैकट्ररी रूपया खग्यो, ओ सरपंच रूपया खाग्यो
प्रधान जी रूपया खाग्यो ,प्रशासन भल्यो मिलग्यो रे
कोई तो मूण्डो खोलो, ए तो नेता अफसर मिल गया रे
गांव का विकास में घोटालो कर गयो रे

जयनारायण व्यास जी ने जनता की दयनीय स्थिति, करों की अधिकता, नौकरशाही की कमियों के कारण प्रजातन्त्रीय व्यवस्था स्थापित करने हेतु लिखा ताकि प्रत्येक व्यक्ति को राज चलाने में भागीदारी मिल सके।

म्हाने ऐसो दीजो राज, म्हारा राजा जी
गांव-गांव पंचायत चुणकर, पंच चलावे राज।
वोट नांख ले पंच चुणीजे, म्हारी करे आवाज
कम खरचे सू काम चलावे, करे न काज कुलाज।
घणी पढाई और सफाई, मिले पेट भर नाज
चंगा ताजा मिनख रहे सब बंधे प्रेम री पाज।

निष्कर्ष

राजस्थानी साहित्य विलक्षण है राजस्थान की अनेक ऐतिहासिक काव्यकृतियों ने इतिहास की लुप्त कडियों को जोडने में महत्वपूर्ण भूमिका तो निभायी ही है, साथ-साथ ही यहाँ की भाषा और साहित्य ने कायर से कायर मनुष्य को वीरता का अमृत पिलाया। नि:सन्देह राजस्थान के जनाक्रोश एवम् जन चेतना से युक्त साहित्य ने भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में जान फूँकने का कार्य किया। इन साहित्यकारों के बिना आजादी की कल्पना नहीं की जा सकती थी। यदि यह कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इन साहित्यकारों ने संघर्ष से घिरे होने के बावजूद अपनी कलम और वाणी को विराम ना देते हुए निरन्तर जनाक्रोश से जनचेतना का मार्ग प्रशस्त किया। तत्कालीन परिस्थितियों में स्वतन्त्रता से तात्पर्य राजनैतिक स्वतंत्रता से ही नहीं था अपितु सामाजिक समस्याओं व कुरीतियों से स्वतंत्रता, कृषकों को शोषण से स्वतंत्रता, स्त्रियों को दुर्दशा से स्वतंत्रता दिलाने के साथ-साथ चरखा खादी, ग्राम स्वावलम्बन, सामाजिक न्याय तथा समानता आदि सभी पक्ष स्वतंत्रता के विविध आयाम के रूप में साथ रहे। अत: राजस्थान का स्वतंत्रता संग्राम एक सम्पूर्ण क्रांति माना जा सकता है जिसमें राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक स्वतंत्रता के लिए की गई क्रांति कलम से ही बराबर लड़ी गयी।

संदर्भ सूची

1. परिहार, डॉ. जगमोहन सिंह, राजस्थानी भाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, जोधपुर 1987, पृ. 27
2. गरवा, डॉ. रामकुमार, राजस्थान के साहित्य संस्कृति में शेखावाटी का योगदान, जोधपुर, 2011, पृ. 17
3. परिहार, जगमोहन सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 12
4. वही पृ. 28
5. पाण्डे, डॉ. राम, सम्पादित राजस्थान जन आन्दोलन साहित्य, जयपुर, 2004, पृ. 17
6. पानगडिया, बी.एल., राजस्थान में स्वतंत्रता संग्राम, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 1985, पृ. 8
7. कविया, डॉ. शक्तिदान, राजस्थानी साहित्य का अनुशीलन, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, पृ. 90
8. व्यास, डॉ. आर.पी., 1857 में मारवाड, विश्वविद्यालय पत्रिका, पृ. 37
9. परिहार, डॉ. जगमोहन सिंह, पूर्वोक्त, पृ. 29
10. बांकीदास, गोरा हट जा, परम्परा, अगस्त 1956, पृ. 54
11. वही पृ. 54-60
12. खडगावत, एन.आर., राजस्थान का 1857 की क्रान्ति में योगदान, पृ. 7-8
13. व्यास, डॉ. रामप्रसाद, स्वतंत्रता संग्राम में राजस्थान का योगदान, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2004, पृ. 65